Airo International Research Journal
Volume XVI, ISSN: 2320-3714
April, 2018
Impact Factor 0.75 to 3.19

UGC Approval Number 63012

मनुस्मृति : एक विवेचन

डॉ० जगतनारायण
माँ दुर्गानगर, कुरुक्षेत्र (हरियाणा)

सारांश

मनुस्मृति महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है । भारतीय संस्कृति में वेदों को संस्कृति का आधार माना गया है । स्मृतियाँ भी संस्कृति के आधार एवं प्रमाणिक ग्रन्थ हैं मनु का कथन है कि श्रुति वेद है और धर्मशास्त्र इन दोनों से ही धर्म का प्रादूर्भाव हुआ है। सभी विषयों में इनकी प्रमाणिकता अकाट्य एवं असंदिग्ध है । स्मृति में आचार, सदाचार, संस्कार, नैतिक शिक्षा, वर्णाश्रम धर्म, राजनीति, राज्य शासन विधि, राजा तथा प्रजा के कर्त्तव्य, दण्ड व्यवस्था, विवाद पदों का निर्णय, दाय भाग, साक्षी प्रकरण विविध प्रकार के पाप और उनका प्रायश्चित आदि का विस्तृत विवेचन है ।

भारतीय धार्मिक साहित्य में स्मृतियों का विशिष्ट स्थान है । श्रुति अर्थात् वेद के पश्चात् धार्मिक तथ्यों के प्रस्तुतीकरण में स्मृति साहित्य की ही मान्यता है । धर्म का मूल स्रोत जहाँ से प्रवाहित में हुआ है उसमें स्मृति प्रधान है । भारतीय व्यवहार अर्थात् कानून को गुण-दोष के आधार पर सुक्ष्म रूप से समझाने के लिए इन स्मृतियों का अनुशीलन अनिवार्य है, इसलिए मनुस्मृति को कानूनी ग्रन्थ कहा गया है ।

स्मृति का शब्दार्थ है स्मरण अर्थात् वह वस्तु जिसका स्मरण की जाए या परम्परा से प्राप्त की जाए । यह श्रुति का समानार्थी शब्द है । वेदों को स्मरण परम्परा से प्रचलित रहने के कारण श्रुति कहा गया है, इसी प्रकार स्मरण परम्परा से जिन शास्त्रीय नियमों, परम्पराओं एवं आचार संहिताओं को जीवित रखा गया है उन्हें स्मृति की संज्ञा दी गई है । स्मृति के सम्बन्ध में एक यह भी मन्यता है कि ऋषियों, मुनियों जिन प्राचीन परम्पराओं आदि को आत्म-साक्षात्कार के द्वारा स्मरण किया उन्हें भी स्मृति एक नाम दिया गया । इस प्रकार कहा जा सकता है कि स्मृति एक प्राचीन परम्पराओं एवं आचारशास्त्र का मूर्त रूप है ।

शतपथ ब्राह्मण में मनु के द्वारा जलप्लावन के अनन्तर सृष्टि विधान का वर्णन मिलता है -

तपस्तप्त्वाऽसृजद्यन्तु स स्वयं पुरुषो विराट् ।
तं मां वित्तास्य सर्वस्य स्रष्टारं द्विजसत्तमाः ।।[1]

इन स्मृतियों की प्रमाणिकता के आधार पर मनुस्मृति उपलब्ध स्मृतियों में प्राचीनतम ही नहीं हैं बल्कि यह राजशास्त्र और अर्थशास्त्र का सर्वश्रेष्ठ स्मृति ग्रन्थ है । इसके रचनाकार मनु हैं जिसका स्मृतिकारों में सर्वोत्तम स्थान है। वेदों में मनु मानव जाति के पिता के रूप में स्मरण किए गये है । तदनुसार उन्होंने प्रजाओं को रचने में समर्थ दश प्रजापतियों की सृष्टि की । मनुस्मृति के रचनाकार मनु स्वयंभू ने मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्त्यु पुलह, क्रतु, प्राचेतस, वसिष्ठ, भृगु और नारद इन दस प्रजापतियों को उत्पन्न किया -

मरीचिमत्र्याङ्गि रसौ पुलस्त्यम्पुलहं क्रतुम् ।
प्राचेतसं वसिष्ठंच भृगुन्नारदमेव च ।।[2]

इस प्रकार कहा जा सकता है कि मनुस्मृति महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है । भारतीय संस्कृति में वेदों को संस्कृति का आधार माना गया है । स्मृतियां भी संस्कृति के आधार एवं प्रमाणिक ग्रन्थ है । मनु का कथन है कि श्रुति वेद है और स्मृतियाँ धर्मशास्त्र हैं इन दोनों से ही धर्म का प्रादुर्भाव हुआ है ।

ऋग्वेद में यह 'धार्मिक विधियों' तथा 'धार्मिक क्रिया-संस्कारों' में प्रयुक्त हुआ है । छान्दोग्योपनिषद् में धर्मशब्द व्यापक संदर्भ प्रस्तुत करता है। वहाँ यह धर्मशब्द गृहस्थ धर्म, तापसधर्म और ब्रह्मचारी के धर्म की ओर संकेत दे रहा है । अन्ततोगत्वा यह मानव के कर्तव्यों, आर्यजाति की आचार-विधियों का निदेशक बनता है । तैत्तिरीयोपनिषद् का वाक्य विशेषत: विद्यार्थियों को आचार-धर्म का पावन उपदेश दे रहा है, जैसे **'सत्यं वद, धर्मे चर'**[3]

गीता में यह धर्म-सन्देश इस रूप में व्यक्त हुआ है, जैसे **'स्वधर्म निधनं श्रेय:'**[4] । धर्मशास्त्रों में धर्मशब्द इसी का आनुपूर्वी रूप है । मनुस्मृति में मनु से मुनि लोग धर्मसम्बन्धी व्याख्या करने की प्रार्थना करते हैं, जो सब वर्णों-जातियों की शिक्षा के लिए उपादेय है :

भगवन् सर्ववर्णानां यथावदनुपूर्वश: ।
अन्तरप्रभवाणां च धर्मान्नो वक्तुमुर्हसि ।।[5]

यास्वल्क्यस्मृति में यही बात है ।[6] अब प्रश्न यह है कि कौन-सा कार्य धार्मिक माना जाए और कौन-सा कार्य अधार्मिक । इसका उत्तर मनुस्मृति में यह है कि वेद तथा स्मृति प्रतिपादित सज्जनों का आचार तथा मन की प्रसन्नता जिस कर्म में हो वही धर्म है, शेष को, अधर्म कोटि में जानना चाहिए -

वेदोऽखिलो धर्ममूलं स्मृतिशीले च तद्विदाम् ।
आचारश्चैव साधूनामात्मनस्तुष्टिरेच च ।।[7]

महर्षि वेदव्यासजी ने धर्म शब्द की व्याख्या में अत्यन्त सुबोध एवं सर्वसम्मत उत्तर प्रस्तुत किया है । यथा:

परोपकार: पुण्याय पापाय परपीडनम् ।

यहाँ धर्म शब्द एकदम बदल गया, वह 'पुण्य' का वाचक हो गया है अर्थात् जो इस तरह कार्य करेगा वह पुण्यात्मा (धार्मिक), और जो अमुक कार्य करेगा वह पापात्मा (अधार्मिक) हुआ ।

मनुस्मृति के व्याख्याकार मेघातिथि के अनुसार धर्मशब्द के पांच उपादान प्राप्त होते हैं जो इस प्रकार हैं : 1. वर्णधर्म, 2. आश्रमधर्म, 3. वर्णाश्रमधर्म, 4. नैमित्तिक धर्म, जिसे अन्यत्र 'प्रायश्चित्त' धर्म कहा गया है; 5. गुण धर्म (राज-कार्य-संरक्षण धर्म)[8] । प्रस्तुत मनुस्मृति में धर्मशब्द इसी का पोषक है ।

इस प्रकार सामाजिक व्यवस्था तथा राजधर्म-व्यवस्था का प्रतिनिधित्व करने वाला मनुस्मृति ग्रन्थ है जिसका प्रतिपाद्य विषयवस्तु मनूक्त है अत: 'मनु-स्मृति' के नाम से आज हमारे बीच प्रकट है । आगे हम इस बहुमूल्य ग्रन्थ के मूल रचयिता के व्यक्तित्व एंव कृतित्व के विषय में विचार प्रस्तुत करेंगे और यह जानना चाहेंगे कि इसके रचयिता भगवान् मनु हैं या अन्य कोई व्यक्ति विशेष? यदि महर्षि मनु नहीं हैं तो उसका रहस्य क्या है ?

महर्षि मनु

व्यक्तित्व : सब स्मृतिकारों में मनु का व्यक्तित्व महान् है । वह अद्भुत ज्ञानी व्यक्ति के रूप में प्रतिपादित है । वे बहुमुखी प्रतिभा के धनी, सब शास्त्रों में अपनी छाप छोड़ते हैं । मनु के विषय में 'धर्मशास्त्र का इतिहास' जो० पी० वी० काणे द्वारा रचित है, एक प्रामाणिक सामग्री प्रस्तुत करता है जिसका सार संक्षेप विवरण निम्मोक्त है -

ऋग्वेद के अनुसार मनु मानव जाति के आदि पिता हैं । ये ब्रह्मा के मानस पुत्रों की परम्परा में आते है। । मनु से पैदा होने के नाते हम मानव कहलाते हैं **'मानष्यो हि प्रजा:'** । मनु और शतरूपा की कहानी विश्रुत है । ऋग्वेद की एक स्तुति में यह प्रार्थना है कि 'हम मनु के मार्ग से कहीं गिर न जाएं'; फिर वहीं यह भी कहा गया है कि भारतवर्ष में सबसे पहले मनु ने ही यज्ञ किया ।

तैत्तिरीय संहिता एवं ताण्ड्य-महाब्राह्मण के अनुसार मनु ने जो कुछ कहा है वह सब औषध है -

यद् वै किंच मनुरवदत् तद् भेषजम् ।[9]
मनु वैं यत् किञ्चावदत् तत् भैषज्यायै ।[10]

मनु ने अपनी सम्पत्ति अपने पुत्रों में बाँटी थी परन्तु नामानेष्टि नामक पुत्र को इस सम्पदा से वंचित रखा है । यह बात तैत्तिरीय संहिता और ऐतरेय ब्राह्मण में आई है । मनु और प्रलय की कहानी शतपथ ब्राह्मण में आई है । हिन्दी का श्रेष्ठ कवि जयशंकर प्रसाद की कामायनी का कथा विधान इसी की नींव पर निर्मित है जो हिन्दी काव्यों में सम्मलित है, मौलिक हैं ।

महाभारत शान्ति पर्व में मनु को मनु, स्वायम्भुव मनु तथा प्राचेतस मनु कहा गया है । शान्ति पर्व की कथा इस प्रकार है :-

ब्रह्मा जी ने मानव कल्याणार्थ धर्म, अर्थ तथा काम पर एक लक्षात्मक महाकाय ग्रंथ रचा था जो कमी काल में इन्द्र, बाहुदन्तक, बृहस्पति और उसना द्वारा संक्षिप्त कर दिया गया ।

नारद स्मृति के अनुसार मनु ने एक धर्मशास्त्र लिखा था और उसे नारद को पढ़ाया । नारदजी ने मार्कण्डेय ऋषि को, मार्कण्डेय जी ने संक्षेप करके सुमति भार्गव को पढ़ाया; फिर भार्गव ने इसका और छोटा संस्करण चार हजार श्लोकों में बना दिया, जो मानवधर्मसूत्र या 'मानवधर्मशास्त्र' का अति संशोधित रूप संभवत: आज कल का यह 'मनुस्मृति' ग्रंथ है ।

वर्तमान मनुस्मृति के प्रथम अध्याय में संसारोत्पत्ति की कहानी है । इसी संदर्भ में इस प्रकार कहा गया है – "ब्रह्मा ने अपने शरीर को दो भागों में किया, फिर आधे भाग से पुरुष तथा आधे भाग से स्त्री हो गई और उसी स्त्री से विराट् नामक पुरुष की उत्पत्ति हुई । फिर उस विराट् पुरुष ने जिस व्यक्ति को जन्म दिया वह संसार का रचयिता मनु है –

द्विधा कृत्वाऽऽत्मनो देहमर्धेन पुरुषोऽभवत् ।
अर्धेन नारी तस्यां च विराजमसृजत्प्रभु: ॥[11]
तपस्तध्त्वाऽसृजद्यं तु स्वयंमू पुरुषो विराट् ।
तं मां वित्तास्य सर्वस्य स्रष्टारं द्विजसत्तमा: ॥[12]

फिर मनु से भृगु नारद आदि ऋषि पैदा हुए । ब्रह्मा ने मनु को धर्मशास्त्र पढ़ाया, फिर मनु ने मरीच्यादि दस मुनियों को वह ज्ञान दिया:-

इदं शास्त्रं तु कृत्वाऽस्त्रौ मामेव स्वयमादित: ।
विधिवद् ग्राहयामास मरीच्यादींस्त्वहं मुनीन् ॥[13]

कुछ बड़े वेदज्ञ ऋषिगण मनु के पास जाकर वर्णों और मध्यम वर्ग के लोगों के धर्म सम्बन्धी कर्त्तव्यकर्मों को बताने के लिए निवेदन किया और व्यवहार वेत्ता मनु ने इन सब कार्यों को सम्पन्न करने के लिए अपने प्रिय शिष्य भृगु को निर्देश दिया :-

एतद्वोऽयं भृगु: शास्त्रं श्रावयिष्यत्यशेषत: ।
एतद्धि मत्तोऽधिजगे सर्वमेषोऽखिलं मुनि: ॥
ततस्तथा स तेनोक्तो महर्षिर्मनुना भृगु: ।
तानब्रवीदृषीन्सर्वान्प्रीतात्मा श्रूयतामिति ॥[14]

इसी प्रकार मनुस्मृति में भृगु के पढ़ाने की बात शुरू से अन्त तक है और मुनि लोग बीच-बीच में भृगु को रोककर कठिन बातों को समझ लिया करते हैं ।[15]

मनुस्मृति में भृगु के व्याख्यानों में मनु सर्वत्र विराजमान है । यथा– 'मनुराइ' मनोरनुनुशासनम्, मनुरब्रवीत्[16]। इसी प्रकार सर्वज्ञ मनु ने जिस किसी का जो धर्म कहा है, वह सब धर्म वेदों में कहा गया है :-

य: कश्चित्कस्यचिद्धर्मो मनुना प्रतिपादित: ।
स सर्वोऽभिहितो वेदे सर्वशानमयो हि स: ॥[17]

इन सब बातों से विदित होता है कि मनु सचमुच सर्वज्ञानी थे, कुशल व्यवहार वेत्ता थे और इनका धर्मशास्त्रीय ज्ञान व्यापक सन्दर्भो से जुड़ा हुआ था । इस प्रकार यह तथ्य सत्यरूप से प्रकट हुआ कि इस मनुस्मृति का कर्ता मनु नहीं हैं, बल्कि संशोधक सम्पादक के रूप में है । फिर भी प्राचीनता तथा प्रामाणिकता लाने के लिए स्वयम्भू पुत्र 'मनु' को 'स्मृति' शब्द के साथ जोड़ दिया गया है सो उचित ही है यथा-

स्वायम्भुवो मनुर्धीमानिदं शास्त्रमकल्पयत् ।[18]

यह 'मनु की स्मृति' वेदार्थ के अनुसार रचित होने से सब स्मृतियों में प्रधान है :-

मनुस्मृति विरूद्धा या सा स्मृति र्न प्रशस्यते ।
वेदार्थोपनिबद्धत्वात् प्राधान्यं हि मनोः स्मृतेः ॥[19]

याज्ञवल्क्यस्मृति के टीकाकार विज्ञानेश्वर ने 'मनुस्मृति' को मनु प्रणीत कहा है :-

'यथा मनुप्रणीतं भृगुः ।'[20]

इस प्रकार मनु प्रणीत यह 'मनुस्मृति' धर्मशास्त्र ग्रंथ है :-

श्रुतिस्तु वेदो विज्ञेयो धर्मशास्त्रं तु वै स्मृतिः ।[21]

कृतित्व :

गौतम, वसिष्ठ तथा आपस्तम्ब ने मनु का उल्लेख किया गया है । निरुक्तकार स्वयंभुव मनु के मत की चर्चा करते हैं । यास्क की दृष्टि मनु को एक व्यवहार प्रणेता के रूप में देखती है । मनु का पाण्डित्य प्रौढ़ है। इनका मनुस्मृति ग्रंथ ही साक्षी दे रहा है । वैदिक धारा तथा दार्शनिक धारा को जोड़ने वाली मनुस्मृति है । यहाँ वेदान्त की भाँति ब्रह्म का भी वर्णन है । इस प्रकार स्वायंभुव मनु का व्यक्तित्व व्यापक है, उनका कृतित्व रूप यह मनुस्मृति ग्रंथ सर्वश्रेष्ठ है ।

मनुस्मृति का रचना-काल :

प्रश्न है कि मनुस्मृति की रचना कब हुई, इसका नपा-तुला उत्तर देना सहज नहीं है क्योंकि जिस प्रकार मनुस्मृति के रचयिता के विषय में मत-मतान्तर है वैसे ही रचना-काल के विषय में भी तर्क-वितर्क प्रस्तुत हुए हैं जिनका विवरण निम्नोक्त है । इस काल-निर्धारण में बाह्य प्रमाण और आंतरिक प्रमाण प्राप्त है ।

बाह्य प्रमाण :

में कहा जाता है कि मनुस्मृति पर प्राचीन टीका मेधा तिथि है । इनका समय (825-900 ई०) माना गया है।[22] इसके बाद कुल्लूक भट्ट (12वीं शताब्दी) की प्रसिद्ध प्रामाणिक टीका है । याज्ञवल्क्यस्मृति के टीकाकार विश्वरूप ने मनुस्मृति के बारहवें अध्याय से लगभग 200 श्लोकों का हवाला दिया है । वेदान्तसूत्र के भाष्य में आचार्य शंकर ने मनु का उल्लेख किया है और उनके प्रतिपादित विचार मनुस्मृति पर अधिक निर्भर करते हैं ।

तन्त्रवार्तिक में कुमारिल ने मनुस्मृति को सबसे प्राचीन कहा है । महाकवि शूद्रक ने मृच्छकटिक (1939) में पापी ब्राह्मण के दण्ड के विषय में मनु का उद्धरण दिया है :-

अयं हि पातकी विप्रो न वध्यो मनुरब्रवीत् ।
राष्ट्रादम्मात्तु निर्वास्यो विभवैरक्षतैः सह ॥[23]

श्लोक में स्पष्ट है कि पापी ब्राह्मण को मृत्युदण्ड न देकर देश से बाहर निकाल देना चाहिए । वलभी के राजा धारसेन (451 ई०) के समय मनुस्मृति थी; जिसका उपयोग उसने अभिलेख में किया है । मीमांसक शबर स्वामी (ई० 500) ने जैमिनीसूत्र के भाष्य में मनुस्मृति का प्रमाण दिया है । भविष्य पुराण में मनुस्मृति के श्लोकों की चर्चा है । आचार्य बृहस्पति (500 ई०) मनुस्मृति की बहुत प्रशंसा करते हैं । अंगिरा कृत स्मृतिचन्द्रिका में मनु प्रतिपादित धर्मशास्त्र का उल्लेख है ।बौद्ध महाकवि अश्वघोष कृत वज्रकोपनिषद् में कुछ ऐसे श्लोक हैं जो आजकल की मनुस्मृति में भी प्राप्त है ।इसी प्रकार वर्तमान रामायण में भी मनुस्मृति के विचार मिलते हैं ।

उपर्युक्त निर्देशन से यह स्पष्ट हुआ है कि द्वितीय शताब्दी के बाद के अधिकांश विद्वान् लेखक वर्तमान मनुस्मृति को एक प्रामाणिक संदर्भ में ग्रहण करते हैं तथा इस अनुपम कीर्तिकौमुदी की छाप ब्राह्मण ग्रंथ से लेकर रामायण व महाभारत पर भी पड़ी है ।

आन्तरिक प्रमाण :

वर्तमान मनुस्मृति याज्ञवल्क्यस्मृति से बहुत पहले की रचना है । मनुस्मृति में न्याय सम्बन्धी जो विवरण हैं वे कुछ कम लगते हैं । इसके विपरीत याज्ञवल्क्यस्मृति में पूर्ण प्रमाण है । हो सकता है कि मनुस्मृति के बार-बार संक्षिप्त रूप होने से संशोधक ने वह अंश जानबूझकर छोड़ दिया या भ्रम से छूट गया अथवा वह परिस्थिति न रही हो जो याज्ञवल्क्य के समय समाज में उभर कर आई और उन्हें उसके लिए उद्धरण या व्यवस्था देनी पड़ी है । याज्ञवल्क्य का समय तीसरी शताब्दी है । अत: मनुस्मृतिकार मनु इससे बहुत पहले ठहरते हैं तथा इसकी रचना पहले ही होनी चाहिए ।

मनु ने मनुस्मृति में भारत से बाहर की जातियों का उल्लेख किया है जिनमें यवन, कम्बोज, शक, पह्लव तथा चीन के नाम उल्लेखनीय है । इनमें ये यवन तथा कम्बोज और गान्धार लोगों का विवरण प्रियदर्शी अशोक के पाँचवें प्रस्तर अनुशासन (शिलालेख) में भी आया है । अत: मनु ई० पू० तीसरी शताब्दी से बहुतपहले नहीं हो सकते । मनुस्मृति का गठन और विषय-प्रतिपादन धर्मसूत्रों से बढ़कर है अत: इसकी रचना धर्मसूत्रों (ई० पू० 600-300) के बाद हुई है, यह निश्चय होता है । इस प्रकार डॉ० काणे के अनुसार मनुस्मृति का रचना काल ई० पू० दूसरी शताबदी तथा ईसा के बाद दूसरी शताब्दी के बीच संभावित है ।[24] परंतु कविराज सामरचन्द ने अपने 'आयुर्वेद का इतिहास' में श्री काणे साहब की स्थापना की आलोचना की है तथा इस काल-निर्णय में काणे के विचारों को भ्रमात्मक कहा है । कविराज सामरचन्द के अनुसार भृगु का समय ईसा से सत्रह सौ वर्ष पहले स्थित होता है ।

महर्षि भृगु द्वारा संशोधित तथा परिवर्धित वर्तमान मनुस्मृति का अस्तित्व समाज में कब आया, इसका भी उत्तर मनुस्मृति तथा महाभारत के तुलनात्मक अध्ययन में दिया गया है । कुछ संदर्भ इस प्रकार हैं । मनुस्मृति में बहुत ऐतिहासिक नाम आये हैं, जैसे - अंगिरा, अगस्त्य, नहुष, वेन, मनु, निमि, पृथु, भरद्वाज, विश्वामित्र आदि । इसी प्रकार महाभारत में भी ये नाम हैं । मनुस्मृतिकार ने यह नहीं कहा कि ये नाम महाभारत के हैं। महाभारत में 'मनुब्रवीत्, मनुराजधर्मा, मनुशास्त्र जैसे शब्द भी आये हैं जिनमें कुछ उद्धरण मनुस्मृति में भी प्राप्त होते हैं । इसी प्रकार महाभारत के बहुत श्लोक मनुस्मृति में प्राप्त हो जाते हैं । अत: यहाँ भी श्री काणे जी का यही अंतिम निर्णय है कि मनुस्मृति महाभारत से पुराना है । ई० पूर्व चौथी शताब्दी में स्वायंभुव मनु द्वाराप्रणीत एक धर्मशास्त्र था, जो संभवत: पद्यबद्ध था । इसी काल में प्राचेतस मनु का भी राजधर्म था । महाभारत में प्राचेतस का एक वचन उद्धृत है जो वर्तमान मनुस्मृति में ज्यों का त्यों प्राप्त हो रहा है :-

यासां न ददते शुल्कं ज्ञातयो न स विक्रय: ।
अर्हणं तत्कुमारीणामानृशंस्यं न केवलम् ॥[25]

इस प्रकार महाभारत और मनुस्मृति के संदर्भो को सामने रखकर काल-निर्धारण में श्रीकाणे साहब का अन्तिम विचार यही है कि ई० पू० दूसरी शताब्दी एवं ईसा के उपरान्त दूसरी श्ताब्दी के बीच संभवत: भृगु ने मनुस्मृति का संशोधन प्रस्तुत किया ।[26]

मनुस्मृति की समीक्षा :

इस प्रकार मनुस्मृति प्राचीन धर्म ग्रंथ के संक्षिप्त तथा परिवर्द्धित रूप में प्रकट हुई है । यह ग्रंथ आज भी हिन्दुओं के आचार-विचार का प्रामाणिक प्रतिनिधित्व कर रहा है । इसका प्रभाव भारत के बाहर भी पड़ा है। चम्पा के एक अभिलेख में मनु का निम्नोक्त श्लोक मिलता है:-

वित्तं बन्धुर्वय: कर्म विद्या भवति पञ्चमी ।
एतानि मान्यस्थानानि गरीयो यद्युदुत्तरम् ॥[27]

वर्मा का धम्मथट् मनुस्मृति पर केन्द्रित है । इसी प्रकार जावा, स्याम, वालि द्वीप का विधान (कानून) वर्तमान मनुस्मृति पर अवलम्बित है । मनुस्मृति सनातन परम्परा लोकमत तथा अनुभवका मनोहारी धर्मग्रंथ है जिसमें समाज धर्म तथा राजधर्म को पर्याप्त पोषक तत्त्व मिला हैं । आज यह ग्रंथ भारतीय सामाजिक अथवा राजनीतिक व्यवस्था देने में, न्यायालयों में न्याय दिलाने में अमूल्य योगदान कर रहा है । इस प्रकार मनु का व्यक्तित्व तथा कृतित्व सनातन धर्म की धुरी पर अवलम्बित है ।

प्रतिपाद्य विषय :

मानव धर्मशास्त्र के रचयिता मनु को कोई अग्नि रूप कहते हैं, कोई प्रजापति रूप कहते हैं, कोई इन्द्र रूप कहते हैं, कोई प्राण रूप कहते हैं और कोई शाश्वत ब्रह्म रूप कहते हैं । मनु साक्षात् वेद हैं, मनु का अध्ययन सकल पापों को दूर करने वाला है ऐसा सभी महात्माओं का कथन है । ऐसे मनु महाराज के द्वारा रचित मनुस्मृति के समान भारतवर्ष में दूसरा ग्रंथ नहीं है । आज तक अनेक स्थानों में इस ग्रंथ का पूजन होता है, सात पीढ़ी पर्यन्त मनु का अध्ययन न होने पर ब्राह्मण पतित हो जाता है । इस ग्रंथ में सम्पूर्ण धर्म कहे गए हैं । विहित और सम्पूर्ण कर्मों का वर्णन है, चारों वर्णों के परम्परागत आचार व्यवहार का भी वर्णन मिलता है । इसमें जगत् की उत्पत्ति का क्रम, जातकर्मादि सकल संस्कारों का अनुष्ठान, ब्रह्मचारी के कर्त्तव्य, गुरु आदि के अभिवादन की रीति, गुरुकुल से लौटे ब्रह्मचारी का गृहस्थाश्रम में प्रवेश, चारों वर्णों का विवाह, पंच महायज्ञों और नित्यकर्तव्य श्राद्धादि का वर्णन, गृहस्थी के कर्त्तव्य, स्त्रियों के धर्म, वानप्रस्थ धर्म, संन्यास धर्म, राज धर्म, ऋणदान, दायभाग, द्यूत विधान, साक्षी और दण्डविधान तथा मोक्ष धर्म आदि जो कुछ संसार की स्थिति का कारण है, वह सभी विषय इसमें वर्णित हैं ।

मनुस्मृति का विषय-संकलन :

सम्पूर्ण मनुस्मृति 12 अध्यायों में विभाजित है ।इसमें धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष का प्रतिपादन है । इसकी भाषा सरल सुबोध धाराप्रवाह शैली में है । इसमें प्रयुक्त रूप पाणिनि के व्याकरण से गठित है । इसमें उनहीं बातों को स्थान मिला है जो नीतिग्रंथों में, पुराण, रामायण तथा महाभारत और लोकाचार परम्परा में भी स्थान पाये हुए थे। इसके सिद्धान्त याज्ञवल्क्य में मिलते हैं; इसी प्रकार धर्मसूत्रों में तथा कौटिल्य में भी प्राप्त होते हैं ।यथा –

“अलब्धलाभार्था लब्धपारिरक्षिणी रक्षितविवर्धनी
वृद्धस्य तीर्थेषु प्रतिपादिनी च ।”[28] मनुस्मृति में-
अलब्धमिच्छेद् दण्डेन लब्धं रक्षेदवेक्षया ।
रक्षितं वर्धयेद् बुद्धया वृद्धं पात्रेषु निक्षिपेत् ॥[29]

अर्थात राजा अप्राप्त (नहीं मिले हुए सोना, चांदी, भूमि, जवाहरात आदि) को दण्ड के द्वारा (शत्रु को दण्ड देकर या जीतकर) पाने की इच्छा करें, प्राप्त (मिले हुए सोना आदि उक्त पदार्थ) कीदेखभाल करते हुए रक्षा करें ।

श्रुतिस्तु वेदो विज्ञेयो धर्मशास्त्रं तु वै स्मृतिः ।
ते सर्वार्थेष्वमीमांस्येताभ्यां धर्मो हि निर्बभौ ॥[30]

मनु ने वेदों के पश्चात् स्मृतियों को ही धर्म का आधार माना है । मनु का यह भी कथन है कि जो वेदों और स्मृतियों में कहे गए धर्म का पालन करता है उसे इस संसार में यश और परलोक में अनुपम आनन्द प्राप्त होता है :

श्रुतिस्मृत्युदितं धर्ममनुतिष्ठान्हि मा नवः ।
इह कीर्त्तिमवाप्नोति प्रेत्य चानुत्तमं सुखम् ॥[31]

निष्कर्ष की दृष्टि से हम कह सकते हैं कि मनुस्मृति महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है । भारतीय संस्कृति में वेदों को संस्कृति का आधार माना गया है । स्मृतियाँ भी संस्कृति के आधार एवं प्रमाणिक ग्रन्थ हैं मनु का कथन है कि श्रुति वेद है और धर्मशास्त्र इन दोनों से ही धर्म का प्रादूर्भाव हुआ है। सभी विषयों में इनकी प्रमाणिकता अकाट्य एवं असंदिग्ध है । स्मृति में आचार, सदाचार, संस्कार, नैतिक शिक्षा, वर्णाश्रम धर्म, राजनीति, राज्य शासन विधि, राजा तथा

प्रजा के कर्त्तव्य, दण्ड व्यवस्था, विवाद पदों का निर्णय, दाय भाग, साक्षी प्रकरण विविध प्रकार के पाप और उनका प्रायश्चित आदि का विस्तृत विवेचन है ।

संदर्भ :

---

1. मनुस्मृति, 1/33
2. तदेव, 1/35
3. तै॰ 1/11
4. गीता, 3/35
5. मनुस्मृति, 1/2
6. याज्ञवल्क्यस्मृति 1/2
7. मनु 2/6
8. तदेव, 2/25
9. तै॰ सं॰ 2/2/10/2
10. ता॰ 23/16217
11. मनु॰ अ॰, 1.32
12. मनु॰ अ॰ 1, श्लोक 32-33
13. तदेव, 1/58
14. तदेव, 1/59-60
15. तदेव, अ॰ 5, श्लोक 1-2; अ॰ 12, श्लोक-1-2
16. तदेव, 8-168
17. तदेव, 2/7
18. तदेव, अ॰ 1 श्लो॰ 102
19. तदेव, 4/8
20. या॰ स्मृ॰ 1/1 का अवतरण
21. मनु॰ 2/10
22. देखिये - धर्मशास्त्र का इतिहास - पी॰ वी॰ काणे तथा श्री गैरोला-संस्कृत साहित्य का इतिहास, पृ॰ 47
23. मनु॰ 7/16
24. संस्कृत साहित्य का इतिहास, श्री गैरोला, पृ॰ 746
25. मनु॰ 3/54
26. संस्कृत साहित्य का इतिहास, श्री गैरोला, पृ॰ 47
27. मनु॰ 2/163
28. कौटिल्य, 1/4
29. मनु॰ 7/101
30. तदेव, 2/10
31. तदेव, 2/9